International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(4): 216-219

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(4): 216-219
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 28-07-2017
Accepted: 29-08-2017

आरती गुप्ता
शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग,
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू कश्मीर,
भारत

Correspondence
आरती गुप्ता
शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग,
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू कश्मीर,
भारत

सुवर्ण धातु का शोधन एवं भस्मीकरण

आरती गुप्ता

सारांश
प्रस्तुत शोधपत्र में धातु शब्द की व्याख्या करते हुए धातु सोना, चाँदी, ताम्र, रांग्गा, सीसा, लोहा आदि प्रमुख धातुओं से बनने वाले अनेक भस्मों का विस्तार से वर्णन व उनका उपयोग बताया गया है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक धातु के शोधक पदार्थों का विवरण भी यहाँ प्रस्तुत किया गया है। प्रमुख मान्य धातु सुवर्ण के पाँच प्रकार (1) प्राकृत, (2) सहज, (3) वह्नि से उत्पन्न, (4) खनिज से उत्पन्न, (5) रसेन्द्र के वेध से उत्पन्न आदि के अत्यन्त उपयोगी व प्रायोगिक प्रसंगों का गूढ शब्दों में विवेचन किया गया है। इसके अतिरिक्त के उत्तम व निकृष्ट भेदों के साथ–साथ इसके ग्राह्य व अग्राह्य पक्षों का भी यथावत् उद्घाटन किया गया है। यहाँ शोधित सुवर्ण के दोषों के साथ–साथ ही दूषित सुवर्ण के दोषों को भी प्रस्तुत किया गया है। इसके साथ ही सुवर्ण शोधन की पाँच विधियों की भी चर्चा की गई है। यहाँ यह भी निष्कर्ष रूप में प्रस्तुत किया गया है कि पूर्ण रुपेण शोधित सुवर्ण शरीर की साम्यावस्था के साथ–साथ क्षीणबुद्धि व क्षीणस्मृति वाले लोगों के लिए यह स्वर्ण परम उपयोगी सिद्ध होता है।

मूल शब्दः धातु, लोहसप्तक, त्रिदोष, विपाक, बृहंण, कण्टकवेधी पत्र, सूचीवेध्य, कुक्कुटपुट, भस्मीकरण, नवसादर, शीतवीर्य, सन्निपात ज्वर, योषापस्मार, अस्थिशोष।

प्रस्तावना

"स्वर्ण रूप्यं च ताम्रं च रङ्गं यषदमेव च ।
सीसं लौहं च सप्तैते धातवो गिरिसम्भवाः" ।।

सोना, चाँदी, ताम्र, राँगा, जस्ता, सीसा और लोहा ये सात धातुएँ पर्वत में उत्पन्न होने (खान से निकलने) वाली हैं।

धातु षब्द की निरुक्ति — जिसके सेवन से वली–पलित–खालित्य, कृषता–निर्बलता, वृद्धावस्था और रोग नश्ट हो, या हो ही नहीं, अथवा इन रोगों को नाष करके आरोग्य पूर्वक षरीर को धारण करे, उसे धातु कहते हैं अर्थात् धातुओं के भस्मों को सेवन से उपर्युक्त रोगों का नाष तो होता ही है साथ ही मनुश्य बहुत दिनों तक स्वस्थ रहता हुआ सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करता है।[1]
लोह षब्द लुह् धातु से बना है। लोह षब्द में सभी प्रकार के धातुओं को ग्रहण किया जाता है। जो द्रव्य प्रस्तर एवं खनिज द्रव्यों से बलपूर्वक अर्थात् अग्नि में पिघला कर खींचा जाय उसे लोह कहते हैं।[2] सोना, चाँदी, ताँबा, राँगा, सीसा, जस्ता तथा लोहा इन सप्त धातुओं को लोहसप्तक अथवा सप्तलोह भी कहा जाता है।
धातुनिर्वचन के अतिरिक्त धातु परीक्षण में तीन मुख्य विषेशतायें देखी जाती हैं जिससे धातु और अधातु के बीच भेद किया जाता है।
1- कोई भी खनिजद्रव्य (धातु) आभा और प्रभावाला होता है।
2- धातु न्यूनाधिक रूप में विद्युत् धारा को वहन करने वाले होते हैं।
3- बिना रासायनिक विधि से धातु, मद्यसार, तैल, ग्लिसरीन आदि में नहीं घुलते हैं।
स्वर्ण (सोना), तार (चाँदी), आर (पीतल), ताम्र (ताँबा), नाग (सीसा), वंग (राँगा) तथा तीक्ष्णक (लोह) ये सात पदार्थ 'धातु' कहे जाते हैं। विद्वान वैद्य को औशधार्थ प्रयोग करने के लिए इनका षोधन करना चाहिए।[3]

धातुओं के षोधन की विधि— सोना, चाँदी तथा लोह के पत्रों को अग्नि में तपायें और उनको गर्म–गर्म ही तिल तेल में तक्र (मट्ठा) में, का०ची में, गोमूत्र में तथा कुलथी के क्वाथ में तीन–तीन बार बुझाय इस प्रकार स्वर्ण आदि लोहों (धातुओं) की षुद्धि हो जाती है। नाग (सीसा) तथा वंग (राँगा) को तपाकर तिल तेल आदि द्रवों में तीन बार तथा आक के दूध में तीन बार डाल कर इनकी षुद्धि हो जाती है।[4]
सवर्ण धातु की उत्पत्ति — पूर्वकाल में मरीचि, अंगिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और विसिश्ठ यह जितेन्द्रिय सप्तऋशि अपने आश्रम में बैठे हुए थे। उस समय लावण्य तथा षोभा से पूर्ण यौवन वाली उनकी पत्नियों को देख कर कामदेव से जितेन्द्रियता का अभिमान नश्ट हो जाने से (कामपीड़ित होने से) अग्नि का वीर्य धरातल पर पड़ा वही सोना हुआ अर्थात् तभी से सोना की उत्पत्ति हुई।[5]

कौटिल्य अर्थषास्त्र में स्वर्ण के पाँच वर्ण कहे गये हैं।[6]

सुवर्ण भेदः सुवर्ण भेद से पाँच प्रकार है— 1. प्राकृत, 2. सहज, 3. वह्नि से उत्पन्न, 4. खनिज से उत्पन्न, 5. रसेन्द्र के वेध से उत्पन्न।[7]

1. प्राकृत सुवर्ण की उत्पत्ति — रजोगुण से उत्पन्न हुए जिस सुवर्ण से ब्रह्मा जी का आधार भूत अण्ड या ब्रह्माण्ड का हुआ, वह प्राकृत सुवर्ण है और वह देवताओं के लिये भी दुर्लभ है।[8]

2. सहज सुवर्ण उत्पत्ति — जिस सुवर्ण की जरायु से वेश्ठित ब्रह्माजी उत्पन्न हुए, वह सुवर्ण मेरुपर्वत के रूप में परिणत हुआ, उसी को स्वाभाविक (सहज) सुवर्ण कहते हैं।[9]

3. वह्नि सुवर्ण उत्पत्ति — महादेवजी के वीर्य को अग्निदेवता ने पान कर असह्य होने के कारण बाहर निकाल दिया, वही वह्नि से उत्पन्न सुवर्ण कहलाया।[10]

ये तीनों प्रकार के सुवर्ण दिव्य षक्तियों से युक्त और सौलह कलाओं से सम्पन्न है। इनके केवल धारण करने से षरीर अजर–अमर हो जाता है।[11]

4. खनिज सुवर्ण उत्पत्ति — विन्ध्य, सुमेरु, हिमालयादि पर्वत की खानों में उत्पन्न हुआ सुवर्ण खनिज सुवर्ण कहलाता है। वह चौदह कलाओं से युक्त होता है तथा सेवन करने से सब रोगों को नश्ट करता है ।[12]

5. रसेन्द्रवेधस०जात सुवर्ण उत्पत्तिः पारद के वेधन कर्म से उत्पन्न सुवर्ण रसेन्द्रवेधस०जात सुवर्ण कहलाता है। यह रसायन है, औशध–कर्म में उत्तम तथा पवित्र है ।[13]

तीन प्रकार के सुवर्ण का उल्लेख इस प्रकार से हुआ है — स्वर्ण में पहला रस वेध से उत्पन्न सुवर्ण, दूसरा स्वयं भूमि से उत्पन्न, तीसरा अनेक लौह धातु के संयोग से उत्पन्न।[14]

सोने में कुछ विषेशताएँ हैंः अग्नि में अधिक देर तक रखने में मणि, मुक्ता, अभ्रक आदि धातुयें जल जाती हैं, जलकर तौल में कम हो जाती हैं तथा नश्ट हो जाती हैं किन्तु सुवर्ण जलकर न कम होता है और न नश्ट होता है। अतः सुवर्ण अजर तथा अमर है[15] अर्थात् अग्नि में तपाने और सोना कम नहीं होता, सौ पल रजत में दो पल कम हो जाता है, पीतल और सीसा सौ पल में आठ पल कम हो जाते हैं, ताम्र सौ पल में पाँच पल कम हो जाता है और लोहा दस पल कम हो जाता है।[16]

उत्तम सुवर्ण के लक्षणः जो सुवर्ण तपाने में लाल, काटने में सफेद, कसौटी (कसने) में केसर रंग के समान, ताम्र और चाँदी रहित, स्निग्ध, कोमल तथा तौल में भारी हो तो उसे उत्तम सुवर्ण समझना चाहिए।[17] स्निग्ध, मृदु, स्वच्छ एवं पत्र रहित हो और रक्त–पीत वर्ण की आभायुक्त से युक्त हो, साथ ही वह सुवर्ण 16 वर्ण का हो तो रस–रसायन, देह–लोह के लिए श्रेश्ठ है।[18]

निकृश्ट सुवर्ण के लक्षणः जो सुवर्ण देखने में कुछ सफेद, कठिन, रुखा, खराब वर्ण वाला, मैल के सहित, जोर वाला (गांठ के सदृष) तपाने तथा काटने में काला, कसने में सफेद, तौल में हल्का तथा घन की चोट से टूटने वाला हो, उसे निकृश्ट समझ कर औशध के कार्य में त्याग देना चाहिए।[19] अग्नि–ताप में बाहर–भीतर से समान रङ्ग का निकले और तपाने से पूर्व उसका रंग केसर या कुरण्डक–पुश्प जैसा हो वह सुवर्ण उत्तम होता है, किन्तु जो तपाने पर नीला या भूरा हो जाय वह अषुद्ध सुवर्ण होता है ।[20]

ग्राह्य सुवर्ण का लक्षणः सुवर्ण भस्म बनाने से पूर्व सुवर्ण को अग्नि में तपाकर देख लें, यदि सुवर्ण अपनी कान्ति को छोड़कर काला पड़ जाय तो जान लें कि इस सुवर्ण में धात्वन्तर का योग है। यदि अपनी कान्ति को न छोड़ें तो समझ लें यह सुवर्ण षुद्ध है।[21]

सुवर्ण–स्निग्ध, कसैला, कड़वा, मीठा, त्रिदोशनाषक, षीतल, स्वादु, रसायन, रुचिकारक, नेत्रषक्ति और आयु को देने वाला, प्रज्ञा, वीर्य, बल, स्मरणषक्ति और स्वर (वाणी) को देनेवाला, षरीर को सुन्दर करने वाला, षरीर पर धारण करने से पापनाषक और षोभाजनक होता है।[22]

षुद्ध–षोधित सुवर्ण–भस्म के गुणः षोधित सुवर्ण (भस्म) मधुर, तिक्त तथा कशाय, रसयुक्त, विपाक में मधुर, पिच्छिल, पवित्र, बृंहण (रस–रक्तादिवर्द्धक) नेत्र के लिए हितकर, षीतल वीर्यवर्द्धक, बलकारक, गुरू, रसायन, हृदय को हितकर, मेघा (धारणा षक्ति), स्मृति (स्मरणषक्ति), बुद्धि, आयु, कान्ति, वाणी की षुद्धि तथा स्थिरता को करने वाला एवं दोनों प्रकार के (स्थावर–जङ्गम) विश, क्षय, उन्माद, त्रिदोश, ज्वर तथा षोथ को दूर करने वाला होता है।[23]

अषुद्ध–षोधित सुवर्ण भस्म के दोशः अषुद्ध सुवर्ण (भस्म) मनुश्य के बल तथा वीर्य को नश्ट करता है तथा षरीर में रोगों को पुश्ट करता है। सदा दुःख पहुँचाता है और अन्त में मृत्यु भी कर देता है। बिना षोधित सुवर्ण भस्म बल तथा वीर्य को नश्ट करता है एवं रोग तथा मृत्यु को देता है। अतएव यत्नपूर्वक सुवर्ण की भस्म बनानी चाहिए।[24]

सुवर्ण धातु का षोधन

सुवर्ण षोधन की प्रथम विधिः 'रसतरङ्गिणी'[25], 'रसेन्द्रसारसंग्रहः'[26] एवं 'आनन्दकन्द क्रिया'[27] ग्रन्थ में सुवर्ण षोधन की विधि इस प्रकार से है :– स्वर्ण के बड़े–बड़े चौड़े एक–एक तोले के 4–4 इ०च के सूचीवेध्य (कश्क वेधी) पत्र बना लें, सर्वप्रथम बाम्बी की मिट्टी, गृहधूम (घर का धुआँ) ईंट का चूर्ण, गैरिक चूर्ण, सैन्धवलवण, का०ची या निम्बुस्वरस इन सब द्रव्यों को एक पत्थर के खरल मे 4 घण्टे तक खूब पीसे और कटे हुए स्वर्ण के कण्टकवेधीपत्र पर लेपकर धूप में खूब सुखा लें और सूखने के बाद एक सम्पुट' में बन्द करके कुक्कुट या कपोतपुट की अग्नि में पाक करें। स्वाङ्गषीत होने पर सम्पुट खोल कर स्वर्णपत्र खण्ड को झाड़कर कपड़े से पोंछ कर रख लें। इस तरह के षोधन से सुवर्ण में विषेश चमक एवं मृदुता आ जाती है और चाँदी ताँबा आदि मिश्रणजन्य कालिमा भी नश्ट हो जाती है। पाँच मिट्टियों का लेपन सोने पर तीन दिन लगा रहने दें, फिर पुट दें, इस प्रकार से सुवर्ण षुद्ध होता है।

सुवर्ण षोधन की द्वितीय विधिः एक तोले परिमाण के सुवर्ण के पत्रों पर सैन्धानमक, जंगली उपलों की राख बिजौरानींबू के रस में घोटकर इसका लेप दें। जब इन पर लगा हुआ लेप सूख जाय तो इन्हें एक षराव में रखकर कुक्कुटपुट की कोयलों की अग्नि में पुट देने से सुवर्ण सर्वांष षुद्ध उज्जवल रक्तवर्ण हो जाता है।[28]

सुवर्ण षोधन की तृतीय विधिः सुवर्ण–पत्रों को पहले तिल का तेल, गौ का मठा अथवा भैंस का मठा, गोमूत्र, काँजी, कुलथी के बीजों का काढ़ा, यदि कुलथी के बीज न मिलें तो कुलथी के प०चाङ्ग (मूल, डाल, फूल, फल, पत्ती) के काढ़े से भी कार्य हो सकता है। इन पाँचों चीज़ो में सुवर्ण को तप्त कर सात–सात बार बुझा दें। बाद गुण–वृद्धि के लिए कांजी, नींबू का रस, मठा, गो–दुग्ध, इन चार वस्तुओं में स्वर्ण–पत्रों को अग्नि में तपा–तपाकर सात–सात बार बुझा लेने से विषेश षुद्धि हो जाती है।[29]

सुवर्ण षोधन की चतुर्थ विधिः उत्तम सोने के पत्र करके कांजी नींबू के रस, मठा और दूध में तपा कर बार–बार बुझायें अथवा सर्व औशधियों के काढ़े में तपा–तपा कर बुझायें और स्वच्छ पानी से धोने से स्वर्ण षुद्ध हो जाता है। अथवा सम्पूर्ण धातुओं के पत्रों को अग्नि में तपाकर तैल वर्ग में दस बार बुझायें इसी प्रकार तक्रवर्ग में, कांजी में, मूत्रवर्ग में, क्षारवर्ग में, अम्लवर्ग में, पुश्पवर्ग में, रंग में, पत्रों को तपा कर 120 बार बुझायें, तो धातु जो दूसरी कृत्रिम धातु से मिली होती है तो वह जल जाएगी और धातु स्वच्छ गंगाजल के समान निर्मल हो जाएगी।[30]

सुवर्ण षोधन की प०चम विधिः एक कर्श (तोला) सुवर्ण के पत्र (वर्क) में गन्धक या सेंधा नमक और गेरु समान भाग में मिलाकर षराव में बन्द कर आधे प्रहर तक धोंकनी से तेज अग्नि में फूँकने से सुवर्ण षुद्ध होकर श्रेश्ठ वर्ण का हो जाता है।[31]

किन्तु आचार्य 'चरक' ने धातुओं का षोधन एक विषेश प्रकार से करने को बताया है जिसमें तीन कियायें होती थीं। धातुओं को षुद्ध एवं स्वच्छ जल से धोकर, केस के ब्रष से रगड़कर साफ किया जाता था और पुनः तिल तैल में डुबोकर साफ कपड़ा से रगड़कर पोंछ दिया जाता था। अर्थात् 1. पानी 2. केस के ब्रष से रगड़कर साफ करना, 3. पुनः तेल में डुबाकर वस्त्र से पोंछना, यह तीन किया थीं, जिससे धातुओं का दोश (मल) नश्ट हो जाता था।[32]

सुवर्ण धातु का मारण/(भस्मीकरण)

सुवर्ण भस्म की प्रथम विधिः सर्वप्रथम षुद्ध स्वर्णपत्र को कैंची से अत्यन्त सूक्ष्म काट लें, खरल में रखकर सममात्रा में षुद्ध पारद देकर दो तीन दिनो तक दृढ़ मर्दन करें, नवनीत जैसी पिश्टि हो जाने पर निम्बुस्वरस के साथ मर्दन करें। सूखने पर षुद्ध हिङ्गुल चूर्ण देकर मर्दन करें। पुनः क्रमषः षुद्ध गन्धक, षुद्ध मनः षिला एवं नवसादर चूर्ण डालकर कज्जली

करें। 2–3 दिनों तक मर्दन कर पुनः निम्बु स्वरस के साथ मर्दन कर छोटी–छोटी टिकिया बनाकरर सुखा दें। सुखा कर षराव सम्पुट करें और कपोतपुट में पाक करें। दूसरे दिन सम्पुट निकाल कर खोलें और खरल करें। पुनः दूसरे पुट से पारद न दें। किन्तु हिंगुल, गन्धक, मनःषिला और नवसादर प्रत्येक बार देकर निम्बु स्वरस के साथ मर्दन करें और कपोतपुट दें। 4–5 पुट कपोतपुट से देने के बाद अग्निसह होने पर बाद में कुक्कुटपुट देना चाहिए और अन्तिम में परीक्षार्थ गजपुट में 1–2 बार पाक करें। ऐसा कुल 15 बार पुट देने पर सुवर्ण का रक्तवर्ण की भस्म हो जाती है।[33]

सुवर्ण भस्म की द्वितीय विधिः षुद्ध किए सोने को सूई से छेदन करके लायक पत्र बनाकर अर्थात सोने के कंटकवेधी पत्र बनाकर नींबू का रस और पारे की भस्म से लेप करे, फिर गजपुट की आंच में पकायें। इस तरह दस पुट देने से सुवर्ण की भस्म हो जाती है।[34]

सुवर्ण भस्म की तृतीय विधिः षुद्ध पारा और उसके बराबर सुवर्ण लेके खरल में घोटकर, गोली बनाए फिर उसको संपुट में धर कर, नीचे ऊपर गंधक डालकर, मुख बंद करके, कपरौटी करै अनन्तर 30 अन्ने उपलों की आंच देवै इस प्रकार 14 पुट देने से सुवर्ण की निरुत्थ भस्म हो जाती है; परन्तु बार–बार गन्धक डालते रहना चाहिए।[35]

सुवर्ण भस्म की चतुर्थ विधिः षुद्ध सोने के पत्रों पर बार–बार गंधक और पारे की कज्जली का लेप करें, फिर उन पत्रों को कचनार, करियारी और ज्वालामुखी इन तीनों की लुगदी में रख षराव संपुट में रखें और सात कपर मिट्टी भर कर बराबर गजपुट की अग्नि में पका कर सुवर्ण की भस्म हो जाती है।[36]

सुवर्ण भस्म की प०चम विधिः सोने के समान षुद्ध सोनामाखी और उतना ही षुद्ध सीसा का चूर्ण लेकर आक के दूध में पीसे, और सोने के पत्रों को सुई से छिद कर उक्त द्रव्यों का लेप करके मूशा में रखकर पुट देने पर स्वर्ण की भस्म हो जाती है।[37]

सुवर्ण भस्म की शश्ठ विधिः षुद्ध सुवर्ण के पत्रों पर कबूतर की अथवा मुरगा की बीट (जल में सानकर) का लेप करें और उनके बीच–बीच में सुवर्ण के समान भाग गन्धक कार चूर्ण देकर तथा दो सिकोरों के सम्पुट में रखकर पाँच उपलों की कुक्कुट पुट दें और इसी प्रकार नौ पुट दें और दसवीं महापुट तीस उपलों की देनी चाहिए। इसविधि से सुवर्ण की भस्म बन जाती है ।[38]

सुवर्ण भस्म के विषिश्ट गुणः सुवर्णभस्म षिषिर (षीतवीर्य, षीतगुण), जीवन को दीर्घ करने वाली, स्मृतिपद और त्रिदोशजन्य ज्वर (राजयक्ष्माज्वर, सन्निपातज्वर) नाषक होती है। इसके प्रयोग से स्त्रियों का सौन्दर्य तथा मुखलावण्य बढ़ने लगता है। सब अंगों में सुन्दरगठन और रूप उत्पन्न होने से उनमें मनोहरता आ जाती है। सोने की भस्म अत्यन्त स्निग्ध तथा वाणी को षुद्ध करने वाली होती है। चिन्ता, भय, षोक और क्रोध से उत्पन्न होने वाले (हिस्टेरिया, उन्माद, वातिक नैर्बल्य आदि) रोगों को दूर करती है। षिर में रक्तसंचार किया की वृद्धि तथा प्रबल आत्मघात की अभिलाशा में यह अतिलाभदायक होती है। अस्थिक्षत (हड्डी का गलना) अस्थिषोथ तथा संघास्थिवेदना (क्षयजन्य वेदना) एवं पुरातन फिरंगजन्य अण्डमांसवृद्धि, उन्माद, मन की अस्थिरता, योशापस्मार, चित्त का सदा खिन्न रहना, भ्रम, ग्लानि इन सब रोगों को निष्चित रूप से नश्ट करती है। हृदयकम्पन, अण्डकोशों की षोथ, अस्थिषोश (क्षय) तथा मूर्च्छारोग को दूर करती है। इसके प्रयोग से जीर्व कास तथा ष्वास षान्त होती है और षरीर में ओज की वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त स्वर्णभस्म अतीसार संग्रहणी तथा पाण्डुरोगों को भी विभिन्न योगों के रूप में प्रयोग करने पर षान्त करती है।[39] स्वर्णभस्म के सेवन से षरीर में बढ़ी हुई प्रसाद वायु (छमतअमे वितबमे) की उत्तेजनात्मक क्रिया षान्त हो जाती है और क्षीण हुई प्रसाद वायु पुश्ट होकर षारीरिक कार्य सुचारू रूप से करने लगती है और सामावस्था की वायु सी रहकर षरीर के लिए हितकर कार्य करती रहती है। क्षीणबुद्धि तथा क्षीणस्मृतिषक्ति वाले और प्रतिदिन क्षीणता की ओर जाने वाले मनुश्यों के लिए स्वर्ण परम उपयोगी औशधि है।[40]

षुद्ध सुवर्ण को पत्थर पर पानी, मधु या घृत आदि से घिस कर चाटने से आयुश्य, लक्ष्मीपद्र, प्रभा, बुद्धि, कान्ति, स्मृतिप्रद है। सम्पूर्ण रोगों को नाष करने वाला है। पापनाषक एवं पुण्यप्रद है। भूतबाधानाषक, कामषक्ति वर्धक है, सौख्य और पुश्टिप्रद है। क्षीण व्यक्ति को पुश्ट करने वाला, तारूण्य को बढ़ाने वाला, बुद्धि को विकसित करने वाला और वीर्य को बढ़ाने वाला है।[41]

स्वर्ण यद्यपि गुरूग्रह बाधा नाषार्थ धारण किया जाता है तथापि इसके धारण से सभी ग्रह प्रसन्न होते हैं। श्रीः, यष, कीर्ति, आयुश्प्रदाता है, माङ्गल्य है, बुद्धि–विद्या वर्धक है, वाक्पटुत्वकर है, लक्ष्मीकर है, ओजस्व है। भूत–प्रेत बाधा नाषक है।

संदर्भ

1. वलीपलितखालित्य कार्ष्यबल्यजरामयान्।
   निवार्य दधते देहं नृश्णां तद्वातवो मतः।। (आयुर्वेदप्रकाष 3/2)
2. धातुलोहे लुह् इति मतः सोऽत्यकर्शार्थवाची।। (रसरत्न समुचय 5/1)
3. स्वर्णतारारताम्राणि नागवङ्गौ च तीक्ष्णकम्।
   धातवः सप्त विज्ञेयास्ततस्तान् षोधयेद् बुधः।। (षाङ्गधरसंहिता 11/1)
4. स्वर्णतारारताम्रायः पत्राव्यग्नौ प्रतापयेत् ।
   निशिञ्चचेत् तप्ततप्तानि तैले तक्रे च काञ्चिके ।।
   गोमूत्रे च कुलत्थानां कशाये च त्रिधा त्रिधा ।
   एवं स्वर्णादिलोहनां विषुद्धिः सम्प्रजायते ।।
   नागवङ्गौ प्रतप्तौ च गालितौ तौ निशेचयेत् ।
   त्रिधा त्रिधा विषुद्धः स्याद् रविदुग्धेन च त्रिधा ।। (षाङ्गधरसंहिता 11/2,3,4)
5. क) पुरा निजाश्रमस्थानां सप्तर्शीणां जितात्मनाम् ।
      पत्नीर्विलोवय लावण्यलक्ष्मीसम्पन्नयौवनाः ।।
      कन्दर्पदर्पविध्वस्तचेतसो जातवेदसः पतितं
      यद्धरापृश्ठे रेतस्तद्धेमतामगात् ।। (भावप्रकाषः पूर्वार्द्धम् टप्प्ए 4)
   ख) भावप्रकाष निघण्टुः 7/3)
6. जाम्बूनदं षात्तकुम्भं हाटकं वैणवं श्रृङ्गिषुक्तिजं
   जातरूपं रसविद्वमाकरोगद्गतं च सुवर्णम् ।
   किंजल्कवर्णं मृदु स्निग्धमनादि भ्राजिश्ण च श्रेश्ठम् ।
   (कौटिल्य अर्थषास्त्र, अध्यक्षप्रचार, पृ. 159)
7. प्राकृतं सहजं वह्निसम्भूतं खनिसम्भवम् ।
   रसेंद्रवेधसञ्जातं स्वर्ण पञ्चविधं स्मृतम् ।। (रसरत्न समु. 5/2)
8. ब्रह्माण्डं संवृतं येन रजोगुणभवा खलु ।
   तत्प्राकृतमिति प्रोक्तं देवानामपि दुर्लभम् ।। (रसरत्न समु. 5/3)
9. ब्रह्मा येनाऽऽवृतो जातः सुवर्णेन जरायुणा ।
   तत्प्राकृतमिति प्रोक्तां देवानामपि दुर्लभम् ।। (वही 5/4)
10. विसृश्टमग्निना षैवं तेजः पीतं सुदुःसहम् ।
    अभूत्सर्वसमुदिश्टं सुवर्णं वह्निसम्भवम् ।। (वही 5/5)
11. एतत्स्वर्णत्रयं दिव्यं वणै शोडषभिर्युतम् ।
    धारणादेव तुत्कुर्याच्हरीरमजराभरम् ।। (वही 5/6)
12. तत्र–तत्र गिरीणां हि जातं खनिशु यद्भवेत् ।
    तत चतुर्दषवर्शाढयं भक्षितं सर्वरोगहृत् ।। (रसरत्न समु. 5/7)
13. रसेन्द्रवेधसम्भूतं तद्वेधजमुदाहृतम् । रसायनं महाश्रेश्ठं पवित्रं वेधजं हि तत्।। (वही, 5/8)
14. तच्चैकं रसवेधजं तदपरं जातं स्वयं भूमिजं
    किञ्चान्यद्वहलोहसङ्कर भव०चेति त्रिधा काञ्चनम् ।
    (राजनिघण्टुः सुवर्णादिवर्ग /13)
15. दह्यन्ते धातवो वंह्नौ मणिमुक्ताभ्रकादयः ।
    न क्षीयते न म्रियते सुवर्णमजरामरम् ।। (महौशध निघण्टुः वर्ग 5/6)
16. अग्नौ सुवर्णमक्षीणं रजते द्विपलं षते ।
    अश्टौ त्रपुणि सीसे च ताम्रे पञ्चदषायसि ।। (याज्ञवल्क्यस्मृतिः व्यवहाराध्यायः 178)
17. दाहे रक्तं सितं छेदे निकशे कुङ्कमप्रभम् ।
    तारषुल्वोज्झितं स्निग्धं कोमलं गुरू हेम सत् ।। (भावप्रकाषः पूर्वाद्धम 8/8)
18. गुरू स्निग्धं मृदुस्वच्छं निर्दलं रक्तपीतकम् ।
    हेम शोडषवर्णाऽऽढयं षस्यते देह लोहयोः ।। (आनन्दकन्द क्रिया 2/12)
19. तच्छेव कठिनं रुक्षं विवर्णं सभले दलम् ।
    दाहे छेदेऽसितं श्वेतं कशे त्याज्यं लघु स्फुटम् ।। (भावप्रकाषः पूर्वार्द्धम् 8/9)
20. तापे बहिरन्तश्च समः किंजल्कवर्णः कुरण्डकपुश्पवर्णो वा श्रेश्ठः ।

ष्यावो नीलश्चाप्राप्तकः । (कौटिल्यअर्थषास्त्र (अध्यक्ष प्रचार) 13/पृ. 162)

21. निश्टप्तं वहिनना स्वर्णद्युतिः स्वीयां जहाति चेत् ।
दुश्टमित्यवगन्तव्यं षुद्धमेततततोऽन्यथा ।। (रसायनसार प्रकरण्या 3/1)
22. दाहेऽतिरक्तमय यत्ससितं छिदायां काष्मीरकान्ति च विभाति निकाशपटे ।
(आयुर्वेद प्रकाषः 3/26)
23. सुवर्ण षीतलं वृश्यं बल्यं गुरू रसायनम् ।
स्वादुतिक्तं च तुवरं पाके च स्वादु पिच्छिलम् ।।
पवित्रं वृंहण नेत्र्यं मेधास्मृतिमतिप्रदम् ।
ह्रयमायुश्करं कान्तिवाग्विषुद्धिस्थिरत्वकृत् ।।
विशद्वयक्षयोन्मादत्रिदोशज्वरषोशजित् — (भावप्रकाषः पूर्वार्द्धम् 8/10, 11)
24. बलं सवीर्यहरते नराणां रोजव्रजान् पोशयतीह काये ।
असौख्यकृच्चापि सदा सुवर्णमषुद्धमेतन्मरणञ्च कुर्यात् ।।
असम्यङ्मारितं स्वर्णं बलं वीर्यञ्च नाष्येत् ।
करोति रोगान् मृत्युं च तद्धन्याद्यव्रतस्ततः ।। (भावप्रकाषः पूर्वार्द्धम् 8/12, 13)
25. कितानि विषालानि कर्शैकप्रभितानि तु ।
सूचिवेध्यानि पत्राणि सुवर्णस्य समाहरेत् ।।
ततः खल्वम्लपिश्टेन मृत्तिकाप०चकेन वै ।
तानि पत्राणि संलिप्य कपोताख्यपुते पुटेत् ।।
स्वर्णसप्तपुटैरेव षुद्धिमायात्यनुत्तमाम् ।
ष्यामिका हीयते चापि तारताम्रदियोगजा ।। (रसतरङ्गिणी 15/15,16,17)
26. वल्मीकमृत्तिका धूमं गैरिकं चेश्टिका पटु ।
इत्येता मृत्तिकाः प०च जम्बीरैरारनालकेः ।।
पिश्ट्वा लेप्यं स्वर्णपत्रं पुटेन तु विषुध्यति ।
धारयेत् स्वर्पपत्रीभिस्त्रिदिनं प०चमृत्तिकाः ।। (रसेन्द्रसारसंग्रह 1/258, 259)
27. वल्मीकमृत्तिका धूमं गैरिकं चेश्टिका पटु ।
इत्येते मृत्तिकाः प०च जम्बीरैर्वाऽऽरनालके ।
पिश्ट्वा लिम्पेत्स्वर्णपत्रं भस्मच्छन्नं तु खर्परे ।
यावद्द्रवं पुटं तावत्कुर्यात्तेन विषुध्यति ।। (आनकन्द किया 2/16)
28. पुट — रसायनकर्म में पुटपाक की अत्यन्त आवष्यकता होती है रस–महारस–उपरस–साधारणरस धातुओं एवं रत्नों आदि द्रव्यों का मारण (भस्मीरकण) का ज्ञान कराने वालों को पुट कहते हैं। या द्रव्यों के पाक की सत्यता का ज्ञान कराने वाले को पुट कहते हैं। पुट द्वारा पाचित औशधियाँ (भस्म) निर्दोश एवं गुणज्ञ होती है। पुट से भस्मों में विषेश गुण का उदय होता है।
29. क) कर्शोन्मितानीह दलानि हेम्नः खल्वम्लपिश्टेन ससैन्धवेन ।
वन्योपलोत्थेन तु भस्मना वै प्रलेपयेल्लेपविधानदक्षः ।।
ख) लेपं प्रषुश्कं प्रसमीक्ष्य वैद्यः षरावसंस्थानि तु कोकिलाग्नौ ।
पुटेत्पुटे कुक्कुटसंज्ञके तु स्वर्णं भवेच्छोडषवर्णतुल्यम् ।।
(रसतरङ्गिणी 15/18,19)
30. क) तैलादिवर्गे प्रथमं विषोध्य पृथक्–पृथक् हेम च सप्तकृत्वः ।
ततो विषिश्टां गुणभूमदात्री षुद्धि चिकीर्शुः प्रथितेऽत्र वर्गे ।।
ख) का०जीजलं निम्बुजलं च तक्रं दुग्ध गवामित्यतितप्ततप्तम् ।
निवापयेद्धेम च सप्तकृत्वो विषुद्धयति स्वर्णमिति प्रसिद्धम् (रसायनसार 3 प्रकरणम्/5,6)
ग) तैले तक्रे गवांमूत्रे ह्यारनाले कुलत्थजे ।
क्रमात्रिशेचयेत्तप्तं द्रावे द्रावे तु सप्तधा ।।
स्वर्णादिलोहपत्राणां षुद्धिरेशा प्रषस्यते ।। — (रसरत्न समुचय 5/13)
31. हेमपंचदषंषुद्धं सूक्ष्मपत्राणि कारयेत् ।
षोधयेत्कांजिकेनैव पष्चाद्वानिम्बुकैद्रर्वैः ।।
तक्रेणषोधयेद्धमे दुग्धेपंचपुनः पुनः ।
षोधयेत्सर्वमौशध्यैः क्षालयेदुदकैपृर्थक् ।। (बृहद्रसराजसुन्दरम् 5वां अध्याय
(लौह प्रकरणम् 7,8)
32. कर्शप्रमाणं तु सुवर्णपत्रं षरावरुद्धं पटुधातुयुक्तम् ।
अङ्गारसंस्थं प्रहारार्धमानं ध्मातेन तत्स्यान्ननुपूर्ण वर्णम्।। (रसरत्न समुचय 15/12)
33. यथा हि कनकादीनां मणीनां विविधात्मनाम् ।
धौतानां निर्मला षुद्धिस्तैलचैलकचादिभिः ।। — (चरक संहिता, सूत्र स्थान. 5/15)
34. क) विषुद्धस्वर्णपत्राणि कर्शैकप्रमितानि च ।
समादाय समं सूतं दत्वा सम्मर्दयेद् दृढम् ।।
ख) निम्बुद्रावे सम्पेश्य सम्यक् प्रक्षायेत्ततः ।
हिङ्गलं गन्धक०चाथ षिला०च नवसादरम् ।
ग) पृथक् पृथक् कर्शमितं विक्षिप्याम्लेन मर्दयेत ।
संषोश्य चातपे सम्यक् ष्लक्ष्णचूर्णश्च कारयेत् ।।
घ) पुटेत्तावत्प्रयत्नेन यावन्निश्चन्द्रिकं भवेत्।
इत्थं स्वल्पपुटैरेव का०चनं याति प०चताम्।।
(रसतरङ्गिणी 15/49,50,51,52)
35. कृत्वा कण्टकवेध्यानि स्वर्णपत्राणि लेपयेत्।
लुङ्गाम्बुभरमसूतेन म्रियते दर्षाभः पुटेः।। (रसरत्नसमु०चयः 5/14)
षुद्धसूतसमं हेम खल्वे कुर्या०च गोलकम्।
अधोर्ध्वं गन्धकं दत्त्वा सर्व तुल्यं निरुध्य च।।
त्रिंषद्धनोपलैर्देयं पुटान्येवं चतुर्दष।
निरुद्धं जायते भस्म गंधो देयः पुनः पुनः।। (रसमंजरी 5/5,6)
36. षुद्ध हेमश्लक्ष्णपत्रीकृतंतद्वारंवारंसूतगंधानुलिप्तम्।
तीव्रेवन्हौकांचनारेहलिन्या ज्वालामुख्या संपुटेभस्मकुर्यात्।।
(बृहद्रसराजसुन्दरम् 5/17)
37. माक्षिकं नागचूर्णष्च पिश्टमर्करसेन च ।
हेमपत्रं पुटेनैव म्रियते क्षणमात्रतः ।। (रसेन्द्रसारसंग्रहे 1/260)
38. क) पारावतमलैर्लिम्पेदथवा कुक्कुटोद्भवैः ।
हेमपत्राणि तेशां च प्रद्द्यादन्तरान्तरम् ।।
ख) गन्धचूर्णर समं दत्वा षरावयुग्मसम्पुटे ।
प्रदद्यात् कुक्कुटपुटं प०चभिर्गोमयोपलैः ।।
ग) एवं नवपुटान् दद्याद् दषमं च महापुटम् ।
त्रिंषद वनोपलैर्देयं जायते हेम भस्मकम् ।।
(षार्ङ्गधरसंहिता 11/17, 18, 19)
मृत्तं सुवर्णं षिषिरं वयः सथापनमुत्तमम्।
39. स्मृतिप्रदं पर०चैव त्रिदोशज्वरनाषनम्।।
सौन्दर्यमुखलावश्यं ललनानां विवर्धयेत्।
पित्तहारित्वमङ्गेशु जनये०च विषेशतः।।
मृतं सुवर्णं सुस्निग्धं वाग्विषुद्धिकरं परम्।
चिन्ताषोकभयक्रोधसम्भूत्तामयनाषनम्।।
षिरोदेषे प्रविद्धान्तु रक्तस०चरणक्रियाम्।
आत्मघाताभिलाशं च प्राबल्येन समुत्थितम्।।
अस्थिक्षतं त्वस्थिषोथं तथा जङ्गास्थिवेदनाम्।
फिरङ्गजां मुश्कमांसवृद्धि०चपि चिरन्तनीम्।।
उन्मादमथ वैचित्थं योशापस्मारके तथा।
चितोद्वेगं भ्रमं ग्लानि नाषयेदविकल्पतः।।
ह्रद्वेपनप्रषमनं मुश्कषोथप्रणाषनम्।
अस्थिषोशहरं चैव मूर्छात्तिपरिकृन्तनम्।।
कासष्वासप्रषमनं परमोजोविवर्द्धनम्।
अतिसारग्रहणिकापाण्ड्वामयनिशूदनम्।। (रसतरङ्गिणी – 15/71–78)
40. मृतं सुवर्ण षमयेन्नितान्तं प्रसादसंज्ञं पवनं प्रवृद्धम् ।
क्षीणं तथैनं परिवृंहये०च समं समं पोशयतीह काये ।।
प्रक्षीणमेधास्मृति पाटवानां प्रषुश्यदाम्लानकलेवराणाम् ।
प्रमुह्यतां षास्त्रगतौ च नित्यं यूनां षिषूना०च परं प्रषस्तम्।।
(रसतरङ्गिणी – 15/71–78)
41. आयुर्लक्ष्मीप्रभाधीस्मृतिकरमखिल व्याधिविध्वंसिपुण्यं
भूतावेषप्रषान्ति स्मरभर सुखदं सौख्यपुश्टि प्रकाषि ।
गाङ्गेयंचाथ रूप्यं गदहरमजराकारि मेहापहारिक्षीणानां
पुश्टिकारि स्फुटमतिकरणं वीर्यवृद्विप्रकारि ।।
स्निग्धं मेध्यं विशगदहरं बृंहणं वृश्यमग्रयं
यक्ष्मोन्मादप्रषमनपरं देहरोगप्रमाथि ।
मेधाबुद्धिस्मृतिसुखकरं सर्वदोशामयहनं रूच्यं
दीप्तिप्रषमितरुजं स्वादुपाकं सुवर्णम् ।। (रसरत्नसमुचय 5/9,10)